ॐ

भगवान् शंकराचार्य कृत

गायत्री-मन्त्र भाष्य

(हिन्दी अनुवाद सहित)

सम्पादक तथा प्रकाशक

स्वामी नीलकण्ठानन्द सरस्वती

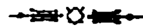






अनुवादक

जानकीनाथ कौल



प्रथम सं० १००० मूल्य—केवल श्रद्धा

नम्र निवेदन तथा समर्पण

यस्य बोधोदये तावत् स्वप्नवद्भवति भ्रमः ।
तस्मै सुखैकरूपाय नमः शान्ताय तेजसे ॥
—अष्टावक्रगीता

सदा सत्स्वरूपं चिदेकं वरेण्यं
विभानन्दभाजं निरीहं शरण्यम् ।
निजं सच्चिदानन्दरूपं परं शं
विभुं नीलकण्ठं भजेऽहम् भजेऽहम् ॥

भगवत्कृपा एक विचित्र रहस्य है। कुछ मास पहले मेरे परम श्रद्धेय, परम पूज्य तथा परमदयालु, गंगातीरवासी, यतिप्रवर श्री स्वामी नीलकण्ठानन्द सरस्वती जी महाराज ने ऋषिकेष मे अनुग्रह-पूर्वक श्रीमदाद्य शंकराचार्यकृत गायत्री-मन्त्र के संस्कृत-भाष्य की स्वहस्तलिखित एक प्रति मेरे पास श्रीनगर भेजी थी। परन्तु मैं श्री स्वामीजी महाराज के दर्शनार्थ शिवानन्दाश्रम, ऋषिकेष गया था। सौभाग्य यह है कि वहीं पर उन्हों ने मुझे यह भाष्य सुनाया। उनके कृपाकटाक्ष से इस अनुपम भाष्य का अर्थ अवगहन कर मुझे आदेश मिला कि मैं इसका हिन्दी भाषा में अनुवाद करूँ। यही वार्ता मेरे श्रीनगर के पत्र में भी लिखी थी। तत्पश्चात् यहां आकर मैं ने यथामति भाष्य का हिन्दी में अनुवाद किया और स्वामीजी महाराज के पास अवलोकनार्थ भेजा। उन्होंने अनुवाद का संशोधन करके उसे मेरे पास वापस भेजा और इच्छा प्रकट की कि इसे मुमुक्षुजन तथा सर्वसाधारण के हितार्थ प्रकाशित किया जाय। उन्होंने आर्थिक सहायता भी प्रदान की।

कई वर्ष हुए मैं ने इस भाष्य के कुछ उद्धरण 'कल्याण' के शक्ति-अंक में छपे एक लेख में पढ़े थे। तब से सम्पूर्ण भाष्य को देखने की इच्छा मेरे मन में थी, परन्तु उपलब्ध न हो सका था। आज करुणा-मय प्रभु ने स्वामीजी महाराज की प्रेरणा तथा सहायता द्वारा उसी

उज्ज्वल रत्न को अनुवादसहित जनता के सामने रखने का मुझे सौभाग्य दिया है।

गायत्री सर्व वेदों की सारभूता, प्रत्यगात्मा एवं ब्रह्म के एकत्व की बोधिका है। गायत्री परमात्मा के सर्वावभासकत्व, अलौकिक ज्योतिर्मयत्व, परमानन्दघनत्व, सर्ववेदमयत्व एवं सर्वात्मत्व आदि दिव्य गुणों को द्योतन करती है। गायत्री-मन्त्र का जप तथा प्राणायाम द्वारा उपासना प्रत्येक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, ब्रह्मचारी, ग्रहस्थ और वानप्रस्थ के लिए श्रुति-स्मृति में अत्यावश्यक विधान हैं।

वेद कहता है— ' गायत्री छंदसां माता '
' गायत्री श्रुतियों की माता है '
' न गायत्र्या परं जप्यं न व्याहृती समं हुतम् '

'गायत्री-मन्त्र से उत्कृष्ट कोई मन्त्र नहीं है और व्याहृतियों से उत्कृष्ट कोई (प्राणायाम रूप) आहुति नहीं है।'

भगवान भाष्यकार शंकर ने इस महामन्त्र के भाष्य में इस प्रकार 'गागर में सागर' भर कर गायत्री का स्वरूप और उसका महत्व सरलतापूर्वक प्रकट किया है। अतः इसे सत्त्वगुणविशिष्ट जनता के लिए अनुवादसहित प्रकाशित करना समीचीन है।

अन्त में, जिनकी असीम अनुकम्पा और बाह्य एवं आन्तर प्रेरणा से यह कार्य सुकर सम्पन्न हुआ है उन अपने हृदय-सर्वस्व पूज्यपाद स्वामी जी महाराज के पावन करकमलों में यह तुच्छ भेंट समर्पण करता हूं।

"शान्ति कुटीर"
७७–द्राबीयार,
श्रीनगर (काश्मीर)

विनीत
अनुवादक
अगस्त १५, १९७५.

उों श्री गणेशाय नम :

नम्र निवेदन

व्याकुर्वन् व्याससूत्रार्थं श्रुतेरर्थं यथोच्यवान्।
श्रुतेर्न्यायः स एवार्थः शङ्करः सः विताननः ॥

"स्वयं भगवान् शङ्कर ही शङ्कराचार्य के रूप में अवतरित होकर व्याससूत्र अर्थात् ब्रह्मसूत्र की व्याख्या करते हुए श्रुति अर्थात् उपनिषदों का यथावत् अर्थ करेंगे। केवल उनका किया हुआ अर्थ ही सम्यक् न्यायपूर्ण होगा।"

इस त्रिकालदर्शी व्यासभगवान् को भविष्यवाणी के अनुसार जहां भगवान् श्री शङ्कराचार्य ने ब्रह्मसूत्र भाष्य, ईश, केन कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेत, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक—इन दस उपनिषदों का भाष्य, श्रीमद्भगवद्गीता भाष्य, पतञ्जल योगसूत्र व्यासभाष्य टीका, विष्णुसहस्त्रनाम भाष्य, सनत्सुजातीय भाष्य, अध्यात्मपटल विवरणम्, अपरोक्षानुभूति, आत्मबोध, प्रबोधसुधाकर, शतश्लोकी, सर्ववेदान्तसिद्धान्तसारसंग्रह, विवेकचूड़ामणि, उपदेश-साहस्री, वेदान्तस्तोत्राणि, भक्तिस्तोत्राणि आदि अनेकानेक स्वतन्त्र ग्रन्थों की रचना की, वहां सर्ववेदसार मन्त्रशिरोमणि अमूल्य गायत्री-मन्त्रभाष्य कैसे छोडते !

मुझे विख्यात कैलासाश्रम, ऋषिकेष (जहां का विद्यार्थी होने का गौरव मुझे प्राप्त है) के आचार्य महोदय पूज्य स्वामी श्री हरीहर-तीर्थ जी महाराज से हस्तलिखित गायत्री मन्त्र शङ्करभाष्य सहित सौभाग्यवश प्राप्त हुआ जिसकी नकल मैंने तुरन्त उतार ली तथा विद्वद्वर्य श्री पण्डित जानकीनाथ कौल एम० ए०, प्रभाकर, अध्यापक श्रीनगर की सहानुभूति तथा सहायता से सरल हिन्दी भाषानुवाद सहित सर्वसाधारण अधिकारी जनता के सामने लाने का प्रयत्न किया। आशा है कि उक्त जनता इस से यथेष्ट लाभ उठायेगी। इति॥

स्वामी नीलकण्ठानन्द सरस्वती,
शिवानन्द आश्रम,
शिवानन्द नगर, ऋषीकेश ॥

ओ३म्

भगवान् शंकराचार्यकृत

गायत्रीमन्त्र भाष्य

(हिन्दी अनुवाद सहित)

ओं श्रीगणेशाय नमः। ओं तत्सत्।

गायत्री जप—मन्त्र

ओं भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ओं।

गायत्री प्राणायाम-मन्त्रः

ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः ओं तपः ओं सत्यं, ओं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्, आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।

गायत्री-मन्त्र भाष्यार्थ

यः—सविता देवः, नः—अस्माकं धियः-कर्माणि धर्मादिविषया वा बुद्धीः, प्रचोदयात्-प्रेरयेत्, तत्-तस्य सर्वासु श्रुतिषु प्रसिद्धस्य, देवस्य-द्योतमानस्य, सवितुः-सर्वान्तर्यामितया प्रेरकस्य जगत्स्रष्टुः परमेश्वरस्य आत्मभूतं, वरेण्यं-सर्वैरुपास्यतया ज्ञेयतया च संभजनीयं, भर्गः-अविद्या

१. (सामान्य अर्थ)—जो सवितादेव हमारी बुद्धि अर्थात् कर्मों को अथवा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की विषय करने वाली बुद्धि (अन्तःकरण की वृत्तियों) को प्रेरित करता है, उस, सब श्रुतियों में प्रसिद्ध प्रकाशमान देव सर्वान्तर्यामी रूप से प्रेरणाकरने वाले जगत्-सृष्टा परमेश्वर के भर्ग का—अविद्या और उसके कार्य का भर्जन करनेवाला होने से 'भर्ग' कहा जाता है—जो सब की आत्मा है,

तत्कार्ययोर्भर्जनाद्भर्गः, स्वयंज्योतिः परंब्रह्मात्मक तेजः, धीमहि-तद्योहं सोऽसौ योऽसौ सोऽहमिति वयं ध्यायेम ।

जो वरण करने योग्य है और जो सब के द्वारा उपास्य और ज्ञेय होने के कारण सावधानी से भजन करने योग्य स्वयं-प्रकाश (सब का स्वरूप) परब्रह्मरूप तेज है, हम अभेदभाव से ध्यान (चिन्तन) करते हैं।

यद्वा तदिति भर्गो विशेषणं-सवितुर्देवस्य तत्तादृशं भर्गो धीमहि। किं तदित्यपेक्षायामाह—य इति लिंगव्यत्ययः, यद्भर्गो धियः प्रचोदयादिति तद्धयायेमेति समन्वयः॥

२. अथवा (आध्यात्मिक अर्थ)—'तत्' यह भर्ग का विशेषण है। सविता देव का जो भर्ग है, उसका हम ध्यान करते हैं। वह क्या है? इस अपेक्षा से कहते हैं। 'यः' इस शब्द का लिंगव्यत्यय है (—मन्त्र में 'यः' ऐसा पुंलिङ्ग प्रयोग है, उसको 'यत्', नपुंसक-लिङ्गरूप समझना चाहिए—)। 'जो भर्ग अर्थात् परब्रह्म हमारी बुद्धि को प्रेरित करता है' 'उसका हम ध्यान करते हैं' इस तरह समन्वय (मेल) है।

यद्वा यः सविता-सूर्यः, धियः-कर्माणि,प्रचोदयात्—प्रेरयति, स तस्य सवितुः-सर्वस्य प्रसवितुः देवस्य-द्योतमानस्य सूर्यस्य, तत्-सर्वैर्दृश्यतया प्रसिद्धं वरेण्यं-सर्वैः संभजनीयं, भर्गः—पापानां तापक तेजोमण्डलं, धीमहि-ध्यायेम, मनसा धारयेम ॥

३. अथवा (आधिदैविक अर्थ)—जो सविता अर्थात् सूर्य बुद्धि-गत कर्मों को प्रेरित करता है, उस समस्त विश्व के प्रसव आदि के कर्ता सवितादेव अर्थात् प्रकाशमान सूर्य का, जो सब के द्वारा देखा जाने के कारण प्रसिद्ध और चाहने योग्य—सब के द्वारा सावधानी से सेवन करने योग्य भर्ग (तेज) तथा पापों को दग्ध करनेवाला अर्थात् नष्ट करनेवाला तेजरूप मण्डल है, उसका हम ध्यान करते हैं अर्थात् उसको हम मन से धारण करते हैं।

यद्वा भर्गः शब्देनात्रान्नमभिधीयते यः सविता देवो धियः प्रचोदयति तस्य प्रसादाद्भर्गोऽन्नादि

४. अथवा (आधिभौतिक अर्थ) भर्ग शब्द से यहां अन्न कहा जाता है। जो सूर्य देव बुद्धि को प्रेरित करता है उसके प्रसाद से भर्ग अर्थात् अन्न आदि लक्षण वाले फल

लक्षणं फलं धीमहि धारयामः तस्याधारभूता भवेमेत्यर्थः ।।

को हम धारण करते हैं अर्थात् वही हमारा आधार है, यह अर्थ है।

प्राणायाम गायत्री महामन्त्र की उपासना

अथ सर्वदेवात्मनः सर्वशक्तेः सर्वावभासकतेजोमयस्य परमात्मनः सर्वात्मकत्व प्रतिपादक गायत्री-महामन्त्रस्योपासना प्रकारः प्रकाश्यते- तत्र गायत्री प्रणवादि सप्त-व्याहृत्युपेतां, शिरः समेतां सर्ववेद-सारमिति वदन्ति, एवंविशिष्टा गायत्री प्राणायामैरुपास्या ।

अब सर्वदेवरूप, सर्वशक्ति, सब के अवभासक, तेजरूप परमात्मा की सर्वात्मकता को सिद्ध करनेवाले गायत्री मन्त्र की उपासना का प्रकार प्रकट करते हैं :—

इस विषय में प्रणव आदि सात व्याहृतियों सहित और शिरोमन्त्र सहित गायत्री मन्त्र को 'सब वेदों का सार' कहते हैं। इस प्रकार (इन) विशेषणों से युक्त गायत्री की प्राणायामों द्वारा उपासना करनी चाहिए।

शुद्धा गायत्री जप में

ओं भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ओं

स प्रणव व्याहृतित्रयोपेता, प्रणवान्ता, गायत्री जपादिभिरुपास्या। तत्र शुद्धा गायत्री प्रत्यक् ब्रह्मैक्यप्रबोधिका। धियो यो नः प्रचोदयादिति—नोऽस्माकं धियो बुद्धीर्यः प्रचोदयात् प्रेरयेदिति-सर्वबुद्धिसंज्ञाऽन्तःकरण प्रकाशक-सर्वसाक्षी प्रत्यगात्मेत्युच्यते, तस्य

उस गायत्री की उपासना प्रणव सहित तीन व्याहृतियों और अन्त में प्रणव सहित मन्त्र के जप आदि से करनी चाहिए। इस विषय में शुद्धा गायत्री अर्थात् व्याहृतित्रय सहित तथा शिरोमन्त्र रहित यह मन्त्र ब्रह्म के साथ जीव की एकता का बोध कराने वाली है।

'धियो यो नः प्रचोदयात्' का अर्थ है 'हमारी बुद्धि को जो प्रेरित करता है'। इस

प्रचोदयाच्छब्दनिर्दिष्टस्यात्मनः स्वरूपभूतं परंब्रह्म तत्सवितुरित्यादि पदैर्निर्दिश्यते, तत्र ओं तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृत इति तच्छब्देन प्रत्यग्भूत स्वतःसिद्धं परं ब्रह्मोच्यते।

से उसकी बुद्धि संज्ञावाला सब अन्तःकरणों का प्रकाशक, सब का साक्षी और प्रत्यगात्मा कहते हैं। उस 'प्रचोदयात्' शब्द से निर्देश किए हुए आत्मा का स्वरूप जो परब्रह्म है, 'तत्सवितुः' पदों से निर्देश किया जाता है। इस विषय में 'ओं तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः' अर्थात् ओं तत् सत्, ऐसे यह तीन प्रकार का सच्चिदानन्दघन ब्रह्म का नाम कहा है, इस स्मृति प्रमाण के अनुस.र 'तत्'शब्द से प्रत्यग्भूत तथा स्वतः सिद्ध पर्ब्रह्म कहा जाता है।

सवितुरिति सृष्टिस्थितिलयलक्षणकस्य सर्वप्रपञ्चस्य समस्तद्वैतविभ्रमस्याधिष्ठानं लक्ष्यते,

'सवितुः' का अर्थ है—सृष्टि स्थिति तथा लय लक्षणवाला जो यह द्वैतप्रपंच (संसार) दिखाई देता है, उस सब के अधिष्ठान सविता का अभेदभाव से ध्यान करते हैं।

वरेण्यमिति सर्ववरणीयं निरतिशयानन्दरूपं

'वरेण्यं' का अर्थ है—सब के द्वारा चाहने योग्य (वरणीय) परिपूर्ण आनन्दस्वरूप,

भर्ग इत्यविद्यादिदोष भर्जनात्मक-ज्ञानैकविषयत्वं,

'भर्ग' का अर्थ है—अविद्यादि दोषों का भर्जन करनेवाला केवल ज्ञान का विषय,

देवस्येति सर्वद्योतनात्मकाखंडसदेकरसं सवितुर्देवस्येत्यत्र षष्ठ्यर्थो राहोः शिरोवदौपचारिकः बुद्ध्यादि सर्वदृश्य साक्षीलक्षणं यन्मे स्वरूपं तत्सर्वाधिष्ठानभूतं परमानन्दं

'देवस्य' का अर्थ है—सब को प्रकाशित करनेवाला अखंड सत् एकरस जो देव है उसका। 'सवितुर्देवस्य (भर्गः)' इस षष्ठी विभक्ति के पद के औपचारिक (काल्पनिक अथवा अमुख्य) भेद में अभेद अर्थ है। जैसे 'राहु का शिर'; यहां पर राहु और शिर

निरस्तसमस्तानर्थरूपं स्वप्रकाशचिदात्मकं ब्रह्मेत्येवं धीमहि ध्यायेम।

वस्तुतः दो (अलग-अलग) नहीं हैं। शिर ही राहु है, राहु से शिर कुछ प्रथक् नहीं है, दोनों का अभेद है। इस लिए यहां पर षष्ठी विभक्ति का भेदवाला अर्थ गौण है एवं लक्षित-मुख्य-अभेदार्थ यह है कि अन्तःकरण आदि सब दृष्यवर्ग का साक्षी जो मेरा स्वरूप है वह सब का अधिष्ठान परमानन्द है, जिस में सब प्रकार के अनर्थों का निरास होता है और जो स्वयंप्रकाश चिदात्मारूप ब्रह्म है उस का हम—'धीमहि'—अर्थात् अभेदभाव से चिन्तन करते हैं।

एवं सति सहब्रह्मणा (हिरिण्यगर्भेन सह) स्वविवर्त्तजड़प्रपञ्चेन सह रज्जुसर्पन्यायेनापवाद सामानाधिकरण्य रूप्यैकत्वन्यायेन सर्वसाक्षी प्रत्यगात्मनो ब्रह्मणा सह तादात्म्यरूपमेकत्वं भवतीति सर्वात्मक ब्रह्मबोधकोऽयं गायत्री मन्त्रः संपद्यते ॥

ऐसा होने पर, हिरण्यगर्भरूप ब्रह्मा सहित और अपने स्वरूप में ही विवर्तभूत जड़ प्रपंच सहित होकर इस में रज्जुसर्पन्याय से अपवाद और शुक्तिका-रजत न्याय से—रजतभाव की एकता के न्याय से—सर्वसाक्षी प्रत्यगात्मा के साथ तादात्म्यरूप एकता होती है। इस तरह सर्वात्मरूप ब्रह्म का बोधक यह गायत्री मन्त्र सिद्ध होता है।

सात व्याहृतियां—'ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः ओं तपः ओं सत्यम्।'

सप्तव्याहृतीनामयमर्थः—

सात व्याहृतियों का यों अर्थ है :—

भूरिति सन्मात्रमुच्यते,

'भूः' से सन्मात्र (जिस से सब जगत् उत्पन्न होता है) कहा जाता है,

भुव इति सर्वं भावं प्रकाशयतीति

'भुवः'—जो सब को सत्ता देता है,

व्युत्पत्या चिद्रूपमुच्यते,

इस व्युत्पत्तिसे चिद्रूप कहते हैं।

स्वरिति सुव्रियत इति व्युत्पत्या सुवरिति सुष्ठु सर्वैर्व्रियमाण सुख स्वरूपमुच्यते,

'स्वः'—'सुव्रियतः' इस व्युत्पत्ति से 'सुवः' जो सबों के द्वारा उत्कृष्टता से वरण किया जाता है। इस से उसे सुखस्वरूप आनन्द कहते हैं।

मह इति महीयते पूज्यते इति व्युत्पत्या सर्वातिशयत्वमुच्यते,

'महः'—जो महान समझा जाता है, पूजा जाता है। इस व्युत्पत्ति से यह सब से अधिक (अतिशय तेज) कहा जाता है।

जन इति जनयतीति जन सकल-कारणत्वमुच्यते,

'जनः'–'जो उत्पन्न करता है' इस व्युत्पत्ति से इस को सब का कारण कहते हैं।

तप इति सर्वतेजोरूपत्वं,

'तपः, शब्द का अर्थ है ज्ञानस्वरूप–'यस्य ज्ञानमयं तपः'–अर्थात् जो सबको प्रकाशित करता है।

सत्यमिति सर्वबाधारहितं।

'सत्यम्'–जो तीनों कालों (भूत, वर्तमान और भविष्यत् अथवा सुषुप्ति, जाग्रत और स्वप्न अवस्थाओं) में सर्व बाधारहित है।

एतदुक्तं भवति—लोके स्वरूपं तदोंकारवाच्यं ब्रह्म वात्मनोऽस्य सच्चिद्रूपस्वभावादिति।

इस विषय में कहा है–सत् चित रूप स्वभाववाला होने से इस आत्मा का स्वरूप जो ब्रह्म ही है, लोक में वह 'ओंकार' नाम से वाच्य अर्थात् कहा जाता है।

अथ भूरादयः सर्वेलोकाः ओंकारवाचा ब्रह्मात्मकाः न तद्व्यतिरिक्तं किंचिदस्तीति व्याहृतयः सर्वात्मकब्रह्मबोधिकाः।

और भूः आदि में पुनः पुनः कहा गया प्रणव-मन्त्र इन लोकों की ब्रह्मरूपता का प्रतिपादन करता है। उस ब्रह्म से व्यति-रिक्त कुछ भी नहीं है, इस से व्याहृतियां ब्रह्म की सर्वात्मकता का बोध कराती हैं।

गायत्री शिरोमन्त्र —'आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्'।

गायत्रीशिरसोऽप्ययमेवार्थः:—

गायत्री शिरोमन्त्र का भी अर्थ इस प्रकार हैं :—

आप इति आप्नोतीति व्युत्पत्या व्यापकत्वमुच्यते,

'आप्लृ व्याप्तौ' धातु से 'आप:' शब्द बनता है। इस व्युत्पत्ति से इस की व्यापकता कही जाती है।

ज्योतिरिति प्रकाशरूपत्वं (काशृ-दीप्तौ),

'ज्योतिः' का अर्थ है-प्रकाशस्वरूप (क्योंकि 'काशृ' दीप्ति के अर्थ से इस में स्वयंप्रकाशमानता है)।

रस इतिसर्वातिशयत्वं,

वही सर्वातिशायी (परमानन्दस्वभाव) होने से 'रस' कहा गया है। 'रसो वै सः'

अमृतमिति मरणादि संसारनिर्मुक्तत्वं,

मरण आदि संसार भाव से निर्मुक्त होने के कारण वह 'अमृत' है।

सर्वव्यापि सर्वप्रकाशकत्वं सर्वोत्कृष्टनित्यमुक्तत्वमात्मरूपं, सच्चिदानन्दात्मकं यदोंकारवाच्यं ब्रह्म तदहमस्मीति गायत्रीमन्त्रस्यार्थः

वह सब में व्याप्त और सब का प्रकाशक, सब से उत्कृष्ट और नित्यमुक्त आत्मरूप, सत्-चित्-आनन्द स्वरूप 'ब्रह्म' जो ओंकार से वाच्य है, वह मैं ही हूं। इस प्रकार गायत्री मन्त्र का अर्थ है।

शास्त्र-प्रमाण

गुहाशये ब्रह्महुताशनेऽहं
कर्त्रिदमंशाख्यहविर्हुतं सत् ।
विलीयते नेदमहं भवानी-
त्येष प्रकारस्त्वभिधीयतेऽत्र ।।

"बुद्धि—गुहा की ब्रह्मरूप अग्नि में 'कर्ता' और 'इदं' अंशवाला हवि हवन करने पर (जीवरूप) अहं का विलय हो जाता है। 'मैं यह (दृश्य प्रपंच) न होऊं' इस तरह यह (उपासना का) प्रकार यहां कहा जाता है।।"

यदस्ति यद्भाति तदात्मरूपं
नान्यत्ततो भाति न चान्यदस्ति ।
स्वभावसंवित्प्रतिभाति केवला
ग्राह्यं ग्रहीतेति मृषैव कल्पना ॥

जो कुछ है और जो भासने में आता है वह सब आत्मरूप ही है। उस से अन्य कुछ नहीं भासता है और न कुछ अन्य है ही। स्वभाव से ही केवल संवित् प्रतिभासित होती है। अतः ग्राह्य और ग्रहीता केवल झूठी कल्पना-मात्र है ॥

इति श्रीमच्छङ्करभगवतः कृतौ
गायत्रीभाष्यं समाप्तम्।

इस प्रकार श्रीमच्छङ्करभगवत्पाद द्वारा किया हुआ
गायत्री-भाष्य का अनुवाद समाप्त हुआ।
शुभमस्तु-ओंतत्सत् ॥

मुद्रक :—
इन्डो प्रिन्टिंग प्रेस, श्रीनगर